आनन्द बेला

काव्य संग्रह

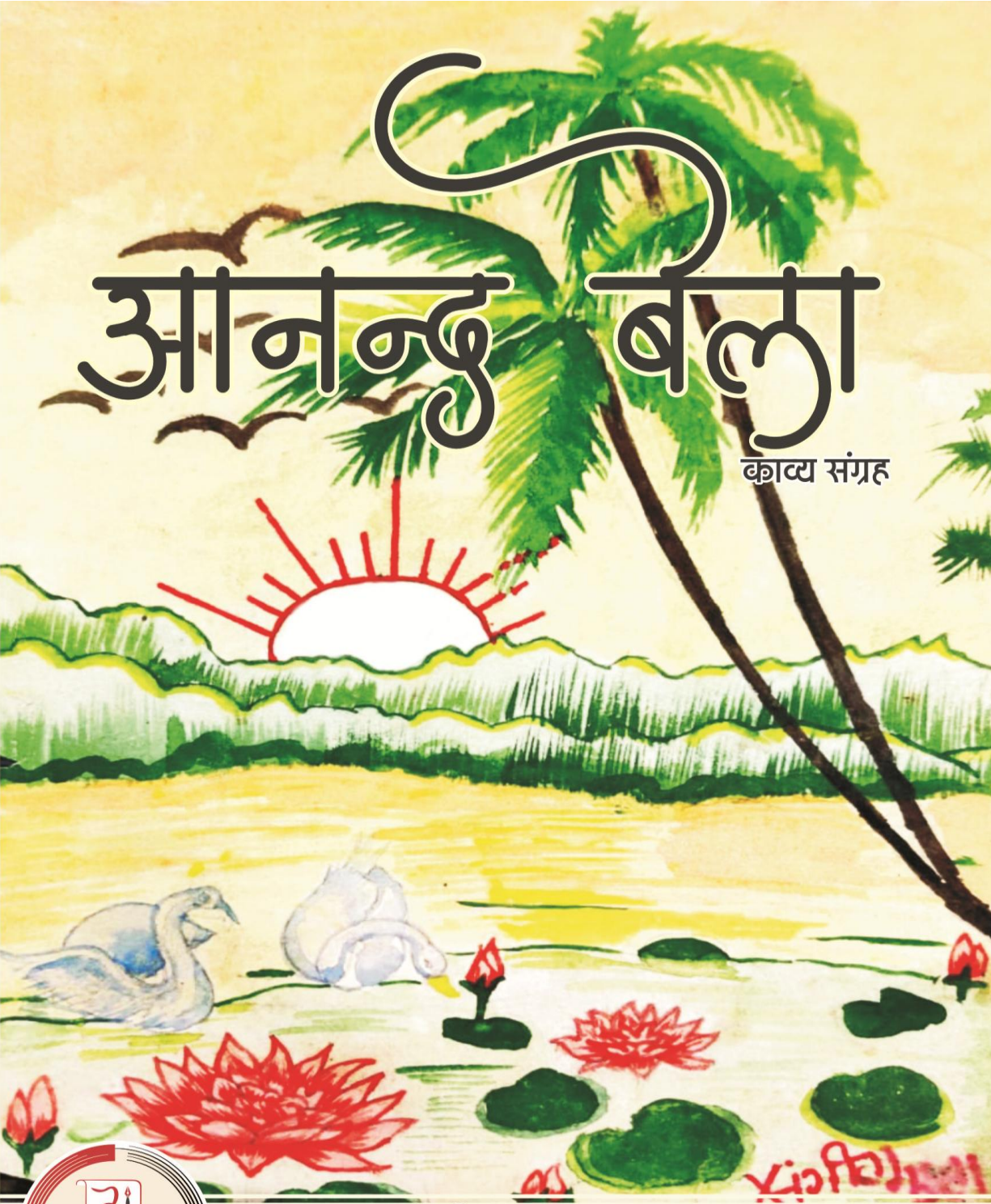

संगीता गुप्ता

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

आनंद बेला

काव्य संग्रह

संगीता गुप्ता

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN - "978-93-5372-076-6"

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

संपादक- प्रीति समकित सुराना

तकनीकी संपादक - संदीप कुमार सोनी

मुख्य कार्यालय - १५ नेहरू चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) ४८१३३१

दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५६

मोबाईल- ६४२४७६५२५६

अणुडाक -।ntrashabdshakti@gmail.com

अंतरताना - www.antrashabdshakti.com

प्रथम संस्करण - २०१६, **संगीता गुप्ता**

आवरण चित्र - **संदीप सोनी, वारासिवनी**

मूल्य - १२०.०० रूपये

मूद्रक- **शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी**

AANAND BELA BY SANGEETA GUPTA

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

समर्पण

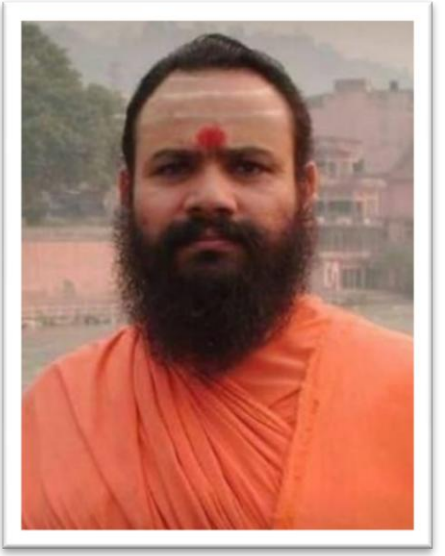

गुरूवर आप ज्ञान हो गीता और पुराण हो।
कथा राम की आप हो आप स्वयं का भान हो।।
हिमालय की सुदृढ़ता हारी आपके सामने।
धनी आप संकल्प के विकल्पों का समाधान हो।।

गुरुदेव
परम श्रद्धेय
श्री भवानीनंदन यति जी महाराज
के चरण कमलों में वंदन सहित
'आनंद बेला'
उन्हें **समर्पित** करती हूं।

आत्मकथ्य

ऐसा स्पष्ट नहीं कह सकती कि कैसे साहित्य के बीज पड़े पर इतनी अवश्य अनुभूति होती है कि बचपन में मिले प्रकृति के सानिध्य ने ही अंतर्निहित प्रतिभा को जागृत किया है। मैं लगभग आठ-नौ वर्ष की रही होऊंगी तभी पिताजी का स्थानांतरण ग्वालियर से पास के एक कस्बे में हुआ। उस समय वे लेखा-परीक्षक के पद पर थे। उस समय कस्बे के मुख्य बाजार से दूर सरकारी आवास हुआ करते थे और वहां सारा पर्यावरण फलदार वृक्षों से भरा हुआ था। सभी आवासों के आगे और पीछे पंद्रह-पंद्रह सौ वर्गफुट के बगीचे हुआ करते थे। इन बगीचों को अधिकारियों को मिले चपरासी बड़े करीने से सजाया करते थे। इन्हीं में कुछ सहेलियों के बगीचों में बारह माह झूले पड़े रहते थे और आषाढ़ के दिनों में झूलों के नीचे पानी भर जाता था। ये जीवंत प्राकृतिक दृश्य हृदय और मन में स्मृति आने पर आज भी आह्लादित करता है। प्रातःकाल हम खुले आकाश के नीचे, सूर्य के रंगीन प्रकाश में ओत-प्रोत होकर धरती की गुनगुनाहट को तलवों से अनुभूत करते हुये पेड़-पौधों में अधर्नींदे से जल देते हुये उठते थे। हम सभी साहित्यकार जानते हैं कि साहित्यरूपी पौध के लिये यही खाद-पानी है।

बचपन में ही कक्षा छह और सात के मध्य में मैं घर में रखी सारी पुस्तकों का अध्ययन कर चुकी थी। पास के शारीरिक प्रशिक्षण महाविद्यालय के पुस्तकालय से मासिक पत्र-पत्रिकाओं का लेन-देन अनवरत चलता था जिन्हें मेरे अध्ययन से होकर गुजरना ही पड़ता था।गायत्री परिवार की अखंड ज्योति और युग निर्माण योजना पढ़ने के बाद ज्यों की त्यों पिताजी की मेज पर रखी हुयी पायी जाती थीं। पिताजी मेरे अध्ययन से एकदम अनभिज्ञ थे। इनको पढ़कर विचार उर्ध्व होकर धीरे-धीरे ऊंचाई पकड़ने लगे। इन्होंनें मुझे

जातिभेद के बंधनों से मुक्त कर समानता, मानवीय कष्टों के प्रति करुणा और न्याय सिखाया। कठिन से कठिन शब्दों पर पकड़ इन्हीं पत्रिकाओं के माध्यम से हुयी।

माध्यमिक विद्यालय की वाद-विवाद, भाषण और गायन आदि प्रतियोगिताओं के सभी पुरुस्कार मुझे ही मिला करते थे। कई बार मैं ग्लानि से भर जाती कि आखिर सारे पुरुस्कार मुझे ही क्यों मिल रहे हैं क्योंकि अन्य साथियों के उतरे हुये चेहरे देखना मुझे स्वयं की नजरों में दोषी बना देता था।

नवमी कक्षा में पिताजी का स्थानांतरण ग्वालियर हो चुका था। यहां हमारे विद्यालय की वार्षिक पत्रिका में मेरा प्रथम लेख निकला। इसके पहले कक्षा छह में अखंड ज्योति के एक अनुच्छेद को पढ़कर जो भाव निकले थे वो मैंने एक कागज पर उतारे वही मेरी प्रथम कविता थी। जो इस प्रकार है-

स्वर्ग में
जाने की
लगा रही हूं
मैं आस
इसके लिये
कर रही हूं
पूरा प्रयास
लेकिन
मुझे
नहीं है पता
करने से पहले
स्वर्ग में

जाने की
अगमता
मुझे स्वयं में
प्रकाश जगाना है
स्वर्ग धरती पर
लाना है।

उस समय में पिताजी को अपनी वह कविता अनजाने कारणों से संकोचवश नहीं दिखा पायी अन्यथा निश्चित ही मुझे उचित मार्गदर्शन मिलता। मैं यह मानती हूं कि साहित्य का अध्ययन अनुभूति के नूतन आकाश में ले जाता है। इससे मन आनंद पाता है और हृदय भीग जाता है। ज्ञानी जन कहते हैं कि संतों के विचार सारी पृथ्वी के मनुष्यों के अंदर फैल जाते हैं और सारी पृथ्वी इन्हीं विचारों पर चलती है। साहित्यकार भी संत ही होता है उसके विचार भी कई बार सारे वातावरण को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार साहित्यकार समाज को विचार देता है अतः वह दानी या देवता होता है। मैं तो उसे ईश्वर का प्रतिनिधि तक कहती हूं। साहित्यकार सत्य का अनुसंधान करता है और विसंगतियों का न्यायपूर्ण निदान करता है ताकि मानवता का पोषण और पल्लवन हो। साहित्यकार के कारण ही संपूर्ण मानवजाति उच्च विचारों को प्राप्त होती है।यही उच्च विचार उच्च कर्मों में परिवर्तित होते हैं। इससे सभी सद्कर्मों में लीन होने लगते हैं जिससे समष्टि आनंदित होती है अतः साहित्यकार पर पूरे समाज की सद्गति का भार होता है। इस पुस्तक में गीत और गीतिकाओं के द्वारा इसी उत्तरदायित्व को वहन करने का प्रयास किया है। अब पुस्तक आप जैसे सुधि पाठकों के हाथ में है अतः आप ही बतायेंगे कि यह निर्वहन कितना सफल रहा।

संगीता गुप्ता

अनुक्रमणिका

1.	हे शिव शंकर	९
2.	सरस्वती वंदना	१०
3.	स्नेहमयी माता श्रीमती रमा गुप्ता को समर्पित	११
4.	आदरणीय पिता श्री बाबूलाल गुप्ता को समर्पित	१२
5.	वंदना	१३
6.	इतिहास हमारा हिमगिरि	१४
7.	जय-जयकार	१५ - १६
8.	एक विधान	१७
9.	शीश-सुमन	१८
10.	प्रिय हैं	१९
11.	राम सा पुत्र पायें	२०
12.	बलिदान होना चाहिये	२१
13.	केसर की क्यारी	२२ - २३
14.	आजादी सस्ती नहीं	२४
15.	इक मंत्र बस भारत	२५
16.	आनंद बेला	२६
17.	ओ मेघ	२७
18.	बरखा बहार	२८
19.	प्यासी धरती	२९
20.	बड़ी हो चली	३० - ३१
21.	क्यों काटते	३२
22.	नई आंधी	३३ - ३४
23.	सोन चिरैया	३५
24.	कोई चुग रहा है	३६
25.	आ गया सावन	३७
26.	नेह कहाँ है?	३८

27.	ढलती है बेटी	३९
28.	गुड़िया	४०
29.	भोले से दो कमल	४१
30.	प्रियदर्शिनी	४२
31.	बच्ची पर्दे में डरती है	४३
32.	कहां पायेगी नारी	४४
33.	नारी माता गौ भी माता	४५
34.	बेटियां विहीन सृष्टि	४६
35.	दहेज	४७-४८
36.	हम तो कलमकार हैं	४९
37.	तुममें भी तो मै ही हूँ	५०
38.	रंगो-रोगन	५१
39.	बाधाओं को मत गिनो	५२
40.	सहता गर्मी की तपन	५३
41.	विश्वास कटते जा रहे	५४
42.	सी सा का झूला	५५
43.	भारत का ही था कश्मीर	५६
44.	कलम मेरी ढोती है	५७
45.	बहे जा रहे हैं	५८
46.	विश्वास बंद हुआ है	५९
47.	ये नववर्ष हमारा नहीं है	६०
48.	दिखाना नहीं है	६१
49.	क्यों बेटी बचायें	६२
50.	सृजन का बीज	६३
51.	अच्छा होता	६४

हे शिवशंकर

हे शिवशंकर काल भयंकर।
वास करो तुम मेरे अंतर।।

बिखरा दो ममता के मोती
खाली भर दो मेरी धोती
हाथ रख दो मेरे शीश पर।।

जग से हारा मैं दुखियारा
फिरता हूं मैं मारा-मारा
एक तुम्हीं तो मेरे शंकर।।

राहों में फैले हैं कांटे
चलते-चलते पग में फांटे
मरहम रख दो इन घावों पर।।

(आनंद बेला)

सरस्वती वंदना

बुद्धि ऐसी दो ओ माता वीणावादिनी जगदंबे।
मनुज तारिणी, ज्ञानदायिनी, कृपाकारिणी जगदंबे।।

जीवन मूल्यों का प्राण बनूं मैं
निर्णय में सर्वकल्याण बनूं मैं
जैसे आसार हो किसी घर का
सज्जनता का आयाम बनूं मैं
भरम मिटा दो ओ माता नीर-क्षीर दो जगदंबे।।

तौलूं मैं न कभी निर्बल का धन बल
प्रेरणा-प्रशंसा में होऊं बस
चिन्ता-भय के डरायें अंधेरे
सूरज की फिर तो अगन बचूं बस
कलुष-तम मिटा ओ माता आनंददायिनी जगदंबे।।

छल-कपट की पहचान दो हमको
कब है बहाने भान दो
अहंकार का कंटकवन घेरे
हनन मान न हो ज्ञान दो हमको
तुम मन का बल दो ओ माता तमसहारिणी जगदंबे।।

स्नेहमयी माता श्रीमती रमा गुप्ता को समर्पित

वो मेरी मां है जो मुझे रातों में जगाती हैं।
जब भूखी सो जाती हूं तो नींद में खिलाती है।।

दरवाजे पर खड़ा जो वह बूढ़ा न लौटा देना।
अब भी मां आ कान में धीरे से फुसफुसाती है।।

अब वो कर चुकी कन्यादान कहती हैं स्थिर होकर।
मेरे घर आती है तो प्यासी ही रह जाती है।।

जब मेरा शरीर दे देता है जबाब निर्बल हो।
उनके जर्जर हाथ-पैरों में शक्ति भर आती है।।

अब तो मां दोहराती हैं बार-बार वही बातें।
घर में उनकी बात शायद मानी नहीं जाती हैं।।

हाथों में रहीं जिनके कई-कई चाबियां अब-तक।
वो मालकिन तिजोरी की खाली सी अब आती है।।

जब भी मांगती हूं मैं उनसे मोतियों की माला।
वो मेरी मां है हीरक हार लिये आ जाती है।।

(आनंद बेला)

आदरणीय पिता श्री बाबूलाल गुप्ताजी को समर्पित

हे पिता आप हो गये परमपिता में लीन।
और छोड़ गये माया में विधे दीन-हीन।।

आज हम सब समर्थ पर आप बिन हैं अनाथ।
आप ही थे सहारे कौन करे अब सनाथ।।

आप थे एक पुष्पासन हम पांखुरी पांच।
आज वचन है बंधन पर न आयेगी आंच।।

राम आराध्य राममय निर्णय जैसे राम।
झेल ली सब पीर सहज परमार्थ ही विश्राम।।

जो दुख मैंनें झेले मेरे भाई न झेलें सदा रहा भाव।
कष्ट वृद्ध के मिटैं उनकी रक्षा का चाव।।

आज एक पुत्री लगे है जैसे चक्रव्यूह।
साहसी या कि कर्मठ तोड़ दिये चार व्यूह।।

स्वागत किया गले लगा आ मृत्यु सुस्वागतम।
आज तन बदलूंगा मैं जैसे बदलें वसन।।

(आनंद बेला)

वंदना

वंदना है यही अर्चना है यही,
मेरे देश के युवा बलवान हो।

भीम से वे बनें भीष्म से वे बनें,
ऐसे वे बनें लगे हनुमान हो।।

गली गली बनें फिरअखाड़े।
हरेक मोहल्ले हो नजारे।।

प्रात बेला हो सेहती मेला हो,
ऐसे हैं लगे वे शक्तिमान हो।।

बेटियों की वे रक्षा करें।
रावणों को मिटा आन बढ़ें।।

रात में जाना हो व घर आना हो,
सीताओं को जटायु का भान हो।।

सीमाओं पर वे अड़े रहें।
सीने शत्रु के छलनी करें।।

चैन की नींद हो शत्रु पर जीत हो,
शान्ति से भरा ये हिन्दुस्तान हो।।

(आनंद बेला)

इतिहास हमारा हिमगिरि

इतिहास हमारा हिमगिरि सा,
गद्दारी ने गला दिया।
न कभी हम होते गुलाम पर,
अपनों ही ने दगा दिया।।

टूटे-फूटे मन बना दिये,
मिट्टी सीधी-सादी थी
जिनने तोड़ा और मरोड़ा,
मालिक उनको बना दिया।।

दीमक को चंदन सा समझा,
विजय गंध में डूब गये
डसने लागे तब हम जागे,
सांपों को है सजा लिया।।

धरोहरों पर वे सांसों की,
अतिथि देवो भव लिख गये
अपनों के पाठों को जीने,
देश दांव पर लगा लिया।।

(आनंद बेला)

जय-जयकार

हम सबकी इच्छायें मिलकर नायक से एकाकार हुयीं।
तब जन-मन की वे इच्छायें उसके मुख से गुंजार हुयीं।।
यह राष्ट्र बढ़े यह राष्ट्र चढ़े अन्याय हो साहस भर लड़े।
इससे प्रकृति हुयी हर्षित तब ही उसकी जय-जयकार हुयी।।

संकट में वो अड़ा रहा
ताने सीना खड़ा रहा
पुलवामा के हमले पर
भरकर आंसू तना रहा
जनता के दुख में था दुखी सो शत्रु के घर में राख हुयी।।

माटी थी चंदन-वंदन
अभिमन्यु बना अभिनंदन
हिमाचल सा अभिमान धर
लौटा लाया वो नंदन
घुटनों के बल आया शत्रु विदेशों में अपनी शान हुयी।।

नित नित सैनिक मरते थे
अरि के हम पर हमले थे
पानी बांध दया त्यागी
पहले तो वे चमचे थे
उसने मन की पोथी पढ़ी उसकी साक्षरता कमाल हुयी।।

सेना को कम कर दूंगा
अलगावों को बल दूंगा
लहराय शत्रु का झंडा
उनमें सांसें भर दूंगा
जन-मन की इच्छा को कुचला अब कहते हैं वे हार हुयी।।

एक विधान

चीनी पानी रंग चंदन इस तरह घुल जाये।
सबके जैसे एक से तन एक मन बन जायें।।

सभी बकरों से प्रेम करें
मछलियों के जीवन न हरें
कबूतर मुर्गी निर्भय हो
गाय और बैल अभय चरें
सबके ही धर्म में एक यह विधान हो जायें।।

नर नारी सम सम्मान रहे
सतायें नहीं स्वभाव रहे
दबंगी रसूखी नहीं हो
चरित्र ऊंचे दोनों जियें
जग गलियां समानता से इत्र-इत्र हो जायें।।

मानो तुम वरना जान दो
मेरी रीत को सम्मान दो
शोषण शरीर का करेंगे
नारी नहीं है गुलाम दो
पलते जिन पालनों में विचार भस्म हो जायें।।

शीश-सुमन

माटी के चरणों में शीश सुमन चढ़ते रहेंगे।
भारत मां का मस्तक मुकुटों से मढ़ते रहेंगे।।

उस मां को पता था पल-पल टूटेगी वो
जब बेटा जायेगा तो शेष कब बचेगी वो
पर उसमें अंतरनाद हर क्षण बजता था
कहती रही कि सब कुछ बलिदान करेगी वो
ऐसी मांओं के होते गर्व से कहते हैं हम,
प्राणों के शूलों की बाड़ सदा जड़ते रहेंगे।।

सिंदूर समाज सुख को अर्पित किया उसने
श्रृंगार विजय श्री का ही मांगा था उसने
ओ अमर अपने अंतर तुमको जिऊंगी मैं
साहस रख भंजन करना यही कहा उसने
ऐसी भार्या के होते गर्व से कहते हैं हम,
ऐसे सितारे राष्ट्र क्षितिज पर चमकते रहेंगे।।

सजा दो सरहद सूना करके राखी थाल
पिता घर सूना करो करो सूने त्यौहार
बहन का साहस भाई पहुंचा सीमा पार
धराशाही करके शत्रु पहनी मुंड माल
ऐसी बहनों के रहते गर्व से कहते हैं हम
भारत को विजय तिलक से जगमग करते रहेंगे।।

प्रिय हैं

हम सब भारतीय हैं।
सब धर्म हमें प्रिय हैं।।
देने में नहीं सोचते
बल से कुछ नहीं लूटते
बसते करण हृदय है।
देते दान अभय है।।
विदुर की नीति ही जीवन
विक्रमादित्य सा लिये मन
नीति ही हिरदय है।
चाह मन पर विजय है।।
धीरज में धरती जैसे
शांत हैं विरक्षों के से
सबकी सहमति प्रिय है।
सबका चाहें हित है।।
अहिंसक और सहनशील
जिये सत्य रहते गंभीर
अढ़ते जहां सत्य हैं।
पग अंगद का प्रिय है।।
मेरे भारत जो आया
दे प्रेम अपना बनाया
द्वेष दूर सदैव है।
विश्वास में विनय है।।

राम सा पुत्र पायें

तुम भी ईंट लगाओ हम भी ईंट लगायें।
मर्यादा का आओ मिलजुल मंदिर बनायें।।

राजा प्रजा का आज्ञा पालक
धोबी तक के वचन का धारक
मूरत को सम्मुख पाकर मन में धार पायें।।

मर्यादा पुत्र की जानोगे
आज्ञा पालन खुशी मानोगे
रहीम को भी आशा राम सा पुत्र पाये।।

धर्म पति प्रति निभा गयीं सीता
स्वर्णिम लंका सुख लगा फीका
सोने के महल वाला भी न भरमा पाये।।

(आनंद बेला)

बलिदान होना चाहिये

मातृभूमि कहे बलिदान होना चाहिये।
सोचिये किस कदर कैसे होना चाहिये।।

आस उन युवाओं को न थी क्या बहार की।
खत्म पर कह गये बहार होना चाहिये।।

यातना तिल-तिल सही आत्मा को बांध के।
पर्वतों से भी बड़ा तप होना चाहिये।।

जोश का आतुर शिखर हर पल कहता रहा।
इन फफोलों पर मिर्च अब होना चाहिये।।

छोड़कर खुली हवा घुटन में मस्ती मिली।
कंटक सब हमारे लिये होना चाहिये।।

थालियां सजाकर उपहारों में जान दी।
वे कहें सजावटें और होना चाहिये।।

देशहित में आरजु चुनवा दी खुशी-खुशी।
आदमी में ऐसा नूर होना चाहिये।।

(आनंद बेला)

केसर की क्यारी

सीखो मिलकर रहना फिर हमसे ओ केसर की क्यारी।
भारत माँ की मुकुटमणि हो तुम्हीं हर बेटे की प्यारी।।

तपस्वियों की प्रसन्नभूमि थी तुम थी ऋषियों की छाया
घृणा घृणा कहकहकर तुमने उस पावनता को मिटाया
अलग अलग का बहाना लेकर अपनों को दूर भगाया
गले लगाकर परायेपन को अपनों को किया पराया
एक ही खून है एक ही रंग की चादर है न्यारी।
टुकड़े -टुकड़े प्रेम के कर न लगाओ और चिंगारी।।

एक पंछी जब है मरता तो सारे ही ची-ची करते
मानव तुमने हजारों मारे फिर भी न रंज तुम करते
अच्छा तुमसे वो पंछी जो पंछी को साथी समझता
एक तन वाले एक हैं धर्म एक ही धारणा करता
ताले समस्याओं के अनेक हैं प्रेम की इक चाबी।
नारायण नर में ही बैठता हत्या में शाप भारी।।

सीखो यह कभी तुमने शेर को शेर से लङते देखा
और कभी क्या फिर मोरों को मोर से भिङते देखा
मानव -मानव को प्रतिदिन पर कितना डराता धमकाता
जोड़ किसी किसी से बनाकर कई अपनों से तुङवाता
डूबे हम इकतरफा प्रेम में सब दिया राजी राजी।
बातें तुमने अलग की करके भुला दी रोटी सांझी।।

(आनंद बेला)

आजादी सस्ती नहीं

आजादी सस्ती नहीं प्राणों की कीमत पर मिली है।
सींची थी दर्द से धरती तब तो यह बगिया खिली है।।

सब उमंग सब तरंग त्याग दी देशहित
स्वतंत्रता ही इक लक्ष्य था एकाग्रचित्त
जन-जन में शक्ति, साहस, दीवानगी भर
मां की बेड़ियां कटें स्वप्न था नवल नित
उनके जज्बे में गजब की बहादुरी दरियादिली है।।

स्वप्नदृष्टाओं का स्वप्न आज सच हुआ
आराम, सम्मान, सुख, विलास से अनछुआ
देश दुर्दशा पर कष्टों से तड़पे वो
मेंटने पीर जन की गहा अंधा कुंआ
पीड़ा से पीड़ितों की आज फिर भारत भूमि हिली है।।

उनकी आहुतियों को यूं न तुम मेंटना
मुफलिसों के दर्द गोद में समेटना
खाली पेट आज भी सोता है इन्सां
गरीबी है कलंक अब मिलकर मेंटना
अगन में वो लगन नहीं कायरता ने जुबान सिली है।।

(आनंद बेला)

इक मंत्र बस भारत

तेरा-मेरा कुछ न होता कितना अच्छा होता।
होता सभी अपना सबका कितना अच्छा होता।।
मेरी बोली तेरी भाषा
तेरा प्रान्त हमारा सूबा
मेरा धर्म तुम्हारी जाती
तेरा वेश हमारी भूषा
देश पर सब बलि-बलि जाते कितना अच्छा होता।।
एक झंडे के तल खड़े हो
एक राष्ट्र के प्रेम पगे हो
बान अपनी-अपनी भुलाकर
आन पर जान लिये खड़े हो
भारत इक मंत्र बस होता कितना अच्छा होता।।
ज्यों समीर में गंध घुली हो
क्षीर-नीर सी घुलन घनी हो
पानी की रंगों से प्रीती
संस्कृतियां अब मिली चले हो
दीप अरब मिल बनते भानु कितना अच्छा होता।।

आनंद बेला

शब्द शब्द फूल बन बिखर जाये आनंद बेला है।
गीत का झरना अब बरस जाये आनंद रेला है।

हरिया उठा उपवन आपको देखकर
उजिया गया है नभ आपको देखकर
तारों के दिये कहें ये जगमगाकर
लगता अनंत मुख आईना देखकर
रोम रोम में सुरस सरस जाये आनंद मेला है।।

दिख रहा शीश पर झुका मेरा मन है
हिरदय भी झुका हुआ झुका कण- कण है
तन-मन की डार-डार झुकी स्वागत में
वंदन में मेरी चेतना भी गुम है
भाव-भाव अब बन उमंग जाये आनंद हेला है।।

कण-कण हवा का अभिवंदन बोल रहा
कल-कल पानी नदी सा मन डोल रहा
थापों ने ढोल की थापें दी नभ तक
नर्तन में रमे सुरस कौन घोल रहा
वायु वंदनवार बन बह जाये आनंद ठेला है।।

ओ मेघ

ओ मेघ तुम अब तक न आये।
हिरदय का घट भर-भर आये।।

गली-गली फिर ताल-ताल हो जाये
बहे-बहे बाल भीग कूदे गाये
पपीहे की पी और कोयल की कूं
गगन में गूंजें अंतर तक समाये
पंछी जल भर नभ को जाये।

देखेंगे घन शशि की आंख-मिचौली
होगी रात-रानी भर फूल झोली
पांखें गुलों की चूमेंगी धरा पग
पवन के बिछौनों पर सुगंध टोली
महकी-नाचती धरा गाये।।

बदरा बूंदन की बाहें फैला दो
विरहन धरा जलती प्रीत सरसा दो
धरती बूंदन बाहों में उमगेगी
फसलों की संतति गोद में खिला दो
अंगूरी खेतन में गाये।।

(आनंद बेला)

बरखा बहार

घाट-घाट पे पानी बाट-बाट पे पानी आयी बरखा बहार।
झूम-झूमकर नाचो नाच-नाचकर गाओ लायी जीवन अधार।।

गरजती है जब कारी-कारी बदरिया
मन की नदी में उठती है तब लहरिया
दमकती दामिनी है ऐसे बादर में
मुखड़ा दिखाकर शरमा जाये बहुरिया
घनन-घनन घिर जाओ कारे बादल आओ बरसो-बरसो बारंबार।।

धरती सज बैठी जैसे नयी दुल्हनियाँ
सुमनों से सजी ओढ़के नयी चुनरिया
लगता है गगन नहाकर खड़ा द्वार पर
अलसाई धरती सुबह खोले किवड़िया
मेरा हिरदय लहके वसुन्धरा महके जैसे सुगंध की फुहार।।

भरती हैं ऊँची पेंगे मेरी सखियाँ
लरजती है तब ये अमबा की डगरिया
दर्पण सा ताल है फैला विरक्ष तले
हिन्डोला छूता है गगन की छतरिया
झरर पत्ते झांझे पायल मन की बाजे, बाजे बूँदों के तार।।

प्यासी धरती

प्यासी धरती बोल उठी है क्यूं बादल भूल जाते हो।
सीता ज्यों राम विरह में पानी क्यूं नहीं बरसाते हो।।
खाली की अंतड़ियाँ जैसे
ऐसा नीर इनने निकाला
डाले शूल बदन में ऐसे
छाती को छलनी कर डाला
काया रुग्ण रो रही है पीर में पाथर हो जाते हो।
रोये ज्यों गरीब की बिटिया क्यूं मुझको लूट जाते हो।।
जहर सरिताओं को खिलाया
रोम-रोम में मैल भर दिया
रोक राह जीवन धारा की
नाश मेरा जैसे कर दिया
लेटी नदी अर्थी पर बहरे-अंधे से हो जाते हो।
रीती गगरिया खूब उधड़ी दो बूंद को तरसाते हैं।।
दुशासन हो रहे है ये सब
हरी चुनरिया खींच रहे है
पवन जो थी मौन योगी सी
उसका सुख भी लूट रहें है
जैसे आस वृद्धाश्रम में बेटे क्यूं न ले जाते हो।
माथ किसान के खिंची लकीरें धान क्यूं न बिकवाते हो।।

बड़ी हो चली

ओ वर्षा तुम बड़ी हो चली।
पहले सी नहीं आज मचली।।

स्मरित वो सूरज का रूठ जाना
पखवाड़े बीते वापस आना
घुटनन घर की बगिया में पानी
फिर नावों के कारवां चलाना
मन घर में रख स्कूल थी चली।।
बंधन छोड़ पकड़ी वो गली।।

छम छम नाचती थी रात भर तुम
प्रातः सर्वप्रथम तुम्हीं से मिलन
कोई घंटों चला चलचित्र तुम
सोये-जागे हम तुम्हीं में मगन
तुमने पकड़ी जादुई छड़ी।
काया भू की घुमाय बदली।।

घर में बने झील और तालाब
कलम वो तुम्हारी तुम्हारे हाथ
धन-दौलत न्यौछावर सब तुम पर
उपहार तुम्हारे मिले नायाब
अब तो तुमने चाल बदल ली।
वो कलम फेंक दी कहां भली।।

तुम बुरा मान गयीं पन्नियों से
इस कदर भूखे इन भेड़ियों से
मची है कींचड़ रूप है बिगड़ा
बदबू सड़ांधों की ढेरियों से
इनने छीन ली वो पोटली।
जिसमें रखी मधुर-मधुर झड़ी।।

क्यों काटते

क्यों काटते इनको इनसे घर हमारे और तुम्हारे।
क्यों बंद करते हों हवाओं के झरोखे और द्वारे।।
ये वो पीपल जो हैं विष्णु
इनमें राधा किशन के अणु
शांति के शिखर बैठे बुद्ध
उजले-उजले शुद्ध-प्रबुद्ध
मां ने इसीलिये सोमवती को इनके चरण पखारे।।
ये वो बरगद जो कि है शिव
है वो सावित्री का इष्ट
बैठो सुनो वंशी की धुन
कृष्ण बसे हैं ये ही कदम्ब
इनमें डमरू- वीणा-ढोलक की लय आ सुनो सखारे।।
सीता का कवच ये अशोक
ये नीम हरे सारे रोग
ये आमल करें कायाकल्प
सोने के जिनमें लगे फल
क्यों त्यागते परंपरायें क्यों दौड़ में बेहोश सारे।।

नई आंधी

नई आंधी का अधमी अंधियारा।
गया खाकर अंगना-बगिया-चौबारा।।

दो पुष्प को बगिया नहीं है
संध्या भक्ति के हित नहीं है
कैसे नौने उपवन मेंटे
तब भी पश्चाताप नहीं है
सुरम्य सुरभित था सुंदर संसार जो,
शनैः-शनैः रूखा गया धुंआ सारा।।

स्वच्छ पवन को मन ललके है
चित्र में भी न वृक्ष दिखे हैं
गेंदा, गुलाब, गुल ओ गुड़हल
तस्वीरों में शेष बचे हैं
घावों के कष्टों को सह ही लेंगे,
बचा नहीं हाय कोई और चारा।।

आंगन का घरुआ तुलसी का
वो साथी मेरे बचपन का
सुमधुर सुकंठ नित गीतों से
मां करती थी स्वागत जिसका
नये जमाने में अब ऐसा लगता,
असीस से तुलसी ने नहीं दुलारा।।

(आनंद बेला)

द्वारे परे नीम के नीचे
दादा देखो आंखें मींचे
पोती-पोते आंख-मिचौली
आंगन बहुयें पर्दा खींचे
भाग-भाग अपने डंक मारते,
नहीं बनता भई मदमस्त नजारा।।

है तौलती अपनी संतान
क्या अब आदर-श्रद्धा-सम्मान
कंधों करी जिनने सवारी
आगे आ गये सीना तान
एक नशा में रहे सबै तो नाचें,
पीड़ा कहने कित जाये बंजारा।।

सोन चिरैया

सोन चिरैया आ जाओ।
दाना अपना खा जाओ।।

मेरे पास न वो बगीचा
मैंनें जो सपनों से सींचा
कच्चा -ठंडा वो नम आंगन
जिसमें फुदका था अपनापन
बचपन मेरा दे जाओ।।

कांक्रीट का घना ये जंगल
दूजा एक इमारत का तल
मेरा उसी में है घरौंदा
तेरे घर को जिसने रौंदा
शाप न देना आ जाओ।।

कैसा चित्र था वो सुहाना
जिसमें चिड़िया चुगती दाना
ओढ़े दो कमरों का बाना
इसमें तुझे चाहूं बुलाना
अमरत गीत सुना जाओ।।

लायी माटी की इक हांडी
शीतल भरके उसमें पानी
मेरी गोख के तीन गमले
बैठें दो बातें मिल कर ले
ची-ची करती आ जाओ।।

(आनंद बेला)

कोई चुग रहा है

कदम हौले से रखना कोई चुग रहा है।
दिल से कहो न धड़कना कोई चुग रहा है।।

काफिले परिंदों के रुके हैं कलेऊ करने
कुछ कहने कुछ सुनने ठहाके लगाके हंसने
हमको भी है फुदकना कोई चुग रहा है।।

कलरव इतना मधु जैसे संतों का गायन है
अपनेपन की छांव में अपनों का परायण है
अब पास नहीं फटकना कोई चुग रहा है।।

संतोष और बेखुदी पायी है खूब इनने
अंदर न ही बाहर कहीं नहीं शिकायत इनमें
हमको यूं ही बरतना कोई चुग रहा है।।

हवाओं से कह दो तुम कि थपेड़े न बन जायें
अनजाने मेहमान कहीं बुरा न मान जायें
यही स्वागत कि डरपना कोई चुग रहा है।।

आ गया सावन

बादल खटखट कर रहा नदिया हिलोरें मार रही।
बादल कंकड़ मार रहा नदिया खींसें काढ़ रही।।
बादल नेह समन्दर है जलरानी डूबी डूबी।
बादल गोले खिला रहा कितने मोंह निकार रही।।

ढोल मंजीरे बज रहे आ गया सावन।
पात-बूंदें तालियां दे कर रहे कीर्तन।।
भू हुयी गौरी आकाश हो गया है शिव।
देख गाये सारी सृष्टि शिव-रमा नर्तन।।

आये तुम जो ओ पावस भू पर आनंद छा गया।
पातों पर जो थापें हुई मृदंगानंद आ गया।।
पानी- पवन ने संग संग ठुमके आज लगा दिये।
तन मन की जलन मिटी और फिर रसानंद आ गया।।

उनकी टप टप से हवा में उछलें गंध के मृगछौने।
भेजे इनके प्रेम में बादलों ने उपहार सलौने।।
कबसे विरहन धरा बावरी तपन की अगन में दग्धा।
देखो तप्त हिरदय के अतृप्त ताल-तलैया भरौंदे।।

नेह कहाँ है?

नेह कहाँ है अब शेष पंचतत्वों में खो गया।
तभी तो नमी चली गयी अम्बर भी शुष्क हो गया।।

दो क्षण भी अब कहां किसी के भी हाथों में
जो दे सके कोई अपनों को आभारों में
दिये जिनने उसे सपने उनको क्या देकर गया।।

पूर्वनियत संबंधों की क्यों कोई जिदें सहे
इनके लिये मुरादें अधपकी खाय जी रहे
शुष्क सी आवाज में वो बातें वजनी कह गया।।

रहता रत निरंतर बधाईयों की होड़ में
मंचों की गलबहियों में कोनों से तोड़ में
मुख्य सड़क पर ही मिलता गलियों में क्या रह गया।।

पर लिप्सा की कुर्सियों पर शाश्वत पुष्प कहाँ
सुख साधनों की छाया में वैसे नूर कहाँ
शिखर की इस तृषा को वो बरगद तकता रह गया।।

ढलती है बेटी

संस्कार यहां से, लेती है बेटी।
गैरों के कारण, ढलती है बेटी।।

सीखे थे जैसे, रिवाज ओ रस्में।
उन्हें छोड़ नया, सीखे है बेटी।।

जो दूसरे बाग, जड़े जमाते हैं।
ऐसे पेड़ों सी, बढ़ती है बेटी।।

ऐसे चलो नहीं, पहनों मत ऐसा।
दूसरों के लिये, ढलती है बेटी।।

दूसरों का तेल, रोशन हैं दूजे।
आनंदिता जले, बाती है बेटी।।

होने को उसके, कितना रोकोगे।
झंकारों सी वो, बजती है बेटी।।

जाये जो कि उधर, कभी इधर आये।
जैसे एक गेंद, फिंकती है बेटी।।

गुड़िया

देखो गुड़िया प्यारी सी।
बागों में फुलवारी सी।।

जीभ चिढ़ाये आंख घुमाये,
घूम-घूमकर ये इठलाये,
मगन नाचे मुझे भरमाये,
देखूं तो ये शरमा जाये।
गीतों में लयकारी सी।।

जिद पर जब गुड़िया आ जाये,
धरती पर लोटनी लगाये,
अनजानी क्या करे ये हाय,
सिर की तो पटकनी लगाये।
मीठे में ये खारी सी।।

आंखों में फिर लगी झड़ी है,
बात किसी पर रूठ पड़ी है,
प्यार से इसे सभी मनायें ,
अपनी जिद पर अड़ी हुई है।
कारे में उजियारी सी।।

इसकी जान न पायें बानी,
केवल मां ने ही पहिचानी,
मीठी -मीठी इसकी बतियां,
घोले मिसरी गुड़िया रानी।
नींदों में है लोरी सी।।

(आनंद बेला)

भोले से दो कमल

भोले से दो कमल तोतलेपन से भरे हुये।
मीठा सा वो रस पीने आकुल से सभी हुये।।
इन दृगों को देख मन झूम उठे
अपना बालपना स्मरित हो उठे
पुष्प धरा के या नभ के तारे
मोहर लगी क्या बिसात बिसारें
ऐसी अमिय बोली में भूल गये जग के जुये।
जैसे राम-राम की भेरी लगाते हो सुये।।
नन्हीं के नेत्र यों मुझे भाये
सूरज -शशि साथ गगन में आये
चांद-सूरज के पहियों का ये रथ
आरूढ़ रथ पर स्वर्ग हो आयें
लोहे सी हो पीर और पारसमणि उसे छुये।
आनंद -सागर की लहरों पर लेटे हुये।।
झील में गोल -गोल हंसें आंखें
पंक्ति में गुल के पेड़ सी बांछें
खेलते-खेलते हांफी सांसें
जज्ब गुलाबों ने करी सांसें
आंखें आसदीप उजले किये अंधेरे कुंये।
ये नवदीप प्रकाशित रहें ढकें न इन्हें धुंये।।

प्रियदर्शिनी

प्रियदर्शिनी तुमको स्मरण करते हैं हम हर्षित मन।
इस शस्य श्यामल धरा पर हो तुम्हारा पुनरागमन।।
नारों से नहीं एकता होती
घर से ही लड़ाई शुरू होती
केवल दिया नहीं कोई नारा
जीवन को भी उसी से संवारा
बांध फिरोज संग वैवाहिक बंध
तोड़ डाला धर्मभेद का फंद, प्रिय...१

भारत की सेनाओं से डरकर
सूनसान जब था लाहौर नगर
लौटा दिया कर क्षमा का वरण
जबकि शत्रु कर चुका था भू हरण
वेद ने है क्षमा बड़ी सिखाया
इंदू ने इसे करके दिखाया, प्रिय...२

रक्षक ही बन बैठेगा भक्षक
शायद उन्हें पहले थी भनक
पर अविश्वास करना अधर्म था
जान गंवा भी विश्वास धर्म था
काम फिर आया रक्त का कण-कण
देश सबने देखा रहा अखंड, प्रिय.....३

बच्ची पर्दे में डरती है

नजर-नजर में ढूढ़ रही है गंदगी।
उतर आयी निम्नता पर हाय जिन्दगी।।

अब तो नजरों में बेशर्मी की छाया दिखती है।
युवती उघारी दिखती बच्ची पर्दे में डरती है।।
कलियों को रौंदकर माली ही ठहाके भरता है।
समय की धारा देखकर दिल हाय-हाय करता है।।
किधर गयी बहना-बिटिया की वंदगी।।

उनने थोप दी सभ्यता,दे दिया अंधियारा है।
तन के प्यासे हैं मरने, बैठा यौवन सारा है।।
बचपन की बुद्धि बिगड़ी, सो बिगड़ा देश भावी है।।
समझ सही -गलत की नहीं चुन ली धारा काली है।।
लहर पश्चिम की रेखा मिटाने लगी।।

ऋषियों ने जिया चरित जो उसको याद न करते हैं।
हंसते हैं उन पर नकलचीपन की बात धरते हैं।।
बहन -भाई की बात करो मत महाविद्यालय में।
बदली रोज हो रही प्रेम एक से है खतरे में।।
बहन-बेटियों ने भी आदिमता चखी।।

ज्वर विदेशी सभ्यता का उतरेगा तो निश्चित ही।
निम्नता की ओर उतराई होगी नहीं किंचित भी।।
अधुनातन के प्यासे पुरातन में शान्ति पायेंगे।
अपने में है ऊंचाई ब्रह्मचर्य को सराहेंगे।।
किरण भावी भारत पर बिखरेंगी कभी।।

(आनंद बेला)

कहां पायेगी नारी

सुख कहां पायेगी नारी।
घर और बाहर बेचारी।।
सोच रही मैं बाहर जाऊं
संत सभा में ईश्वर पांऊ
थे पर वे भी तन के लोभी
चादर जिनने उसकी नोंची।।
मजबूरियां कितनी भारी।।
जाल से हैं मुक्ति के दाता
खूब फंसाकर खूब ठहाका
वस्तु माना खूब ही भोगा
विश्वासों का पाला छोड़ा
गिद्धों की धमक की मारी।।
उसने तो रक्खी थी श्रद्धा
उनका भाव था पर भद्दा
उसने माना साथ पिता सा
पर वो हुये पाप का अड्डा
निकरी आस रेता सारी।।
कहां रक्षा मिलेगी उसको
घर में शोषण बाहर भी वो
कहीं छांव की राह नहीं है
गरीब उसकी आह नहीं है
जग प्रपंचों से हारी।।

(आनंद बेला)

नारी माता गौ भी माता

नारी माता गौ भी माता भू पर भाग्य विधाता।
पाकर पोषण और प्रेम नर धन्य-धन्य हो जाता।।

संस्कार पयोनिधि से हृदयांगम हो जाते
संस्कारित नारी -गौ इच्छित राष्ट्र बनाते
आरोग्य-चेतना पूर्ण दुग्ध मृत्यु भगाते
श्री कृष्ण से बलवान कंसकाल बन जाते
गौ के क्षीरपान से वृद्ध भारत युवा बन जाता।।

धात्री-दात्री उपकृत नर फिर भी तो छलते
भ्रूणहत्या-दहेज का छुरा गले पर धरते
मर्यादा रक्षण करती भाग्य मान सहती
गोपाल की गईंयां भी रक्त-रक्त होती
पाने मान मूक सहती फिर न्याय कहां मिल पाता।।

गौ-पालन ही धर्म हर मन में यदि बस जाये
आये कामधेनू गौ-पति इन्द्र हो जाये
नारी यदि घरों में लक्ष्मी सी मान पाये
होगा घर-घर क्षीर-सागर विष्णुजी आयें
गौ-गौरी रक्षण से राष्ट्र कंचन सा जगमगाता।।

(आनंद बेला)

बेटियां विहीन सृष्टि

बेटियों पर कीजिये कृपा न इन्हें मारियेगा।
बेटियांविहीन सृष्टि कैसे चल पायेगी।।

हो रही प्रजातियां विलुप्त जैसे जानवरों की।
जाति भी मानव की सोन चिरैया हो जायेगी।।

मारते रहे बेटी-मां-बहिन को गर कोखों में।
धार सेवा -करुणा-ममता की सूख जायेगी।।

बेड़ियां काट पढ़ाया बढ़ी दहेज -भ्रूण हत्या।
यूं न सोचा ऐसे समृद्धि लालची बनायेगी।।

कंटकी बेल कन्या हरण और कन्या विक्रय की।
नारियों को मध्य युग की दशा में ले जायेगी।।

जा रहीं जहां भी जहां बेटियां हैं जगमगाती।
हो न तो दोनों कुलों में अंधेरियां छायेंगी।।

आ रहीं ओ लक्ष्मी कब भारत देश जब कहेगा।
प्रेम-साहस-पुरुषार्थ की फसलें लहलहायेगी।।

मानुषों ओ मानुष हो न मान करो मानुषों का।
मानुष के दर्द से वरना धरती मिट जायेगी।।

(आनंद बेला)

दहेज

अग्नि की नदि दहेज कन्यायें तिल-तिल जलती हैं।
प्राणलेवा ये प्रथायें फिर भी तो न मिटती हैं।।

जन्मते ही पिता के सिर पर वजन सा होता है
बंद होता हंसना-गाना लाचारी ढोता है
दंडवत् गिरना है दर-दर प्रणाम करने होंगे
निर्बल यहां धन में सो व्यंग्य-बाण सहने होंगे
चारदीवारी में दहेज की सांसें घुटती हैं।।

रिश्वतखोरी हक छीनकर पिता धन कमाता है
मान प्राप्ति के लिये भ्रष्टाचारी बन जाता है
नाक नीची न हो सोच दहेज से घर भर देता
ऐसे बिटिया का पिता अन्याय करता जाता है
कोड़ों जैसी प्रथा समाज पर चोटें करती है।।

दान-दहेज बिना बेटी मजबूर ही होती है
आढ़ी बुद्धि के संग गार्गी-लोपा भटकती हैं
सहती आजीवन विधवा सी जिन्दगी जीती है
बेटी की दशा देखकर मां की आंख टपकती है
दो-दो घर फिर भी बेटी इक घर को तरसती है।।

ओ लड़कों जाग जाओ बात जुबां पर ले आओ
ये मर्यादा नहीं होती होता शोषण घरवालों को बतलाओ
कारण धन के आज बेटी बोझ न रह पायेगी
लक्ष्मी बिना धन के ही अब हर घर में आयेगी
कह दोगे तो बिगड़ी धारा बनती है।।

हम तो कलमकार है

धारें कितनी ही बार मुड़ी हम नहीं मुड़े हैं।
बदले बाजों के साथ कभी हम नहीं नचे हैं।।
धारों को मोड़ रही केवल मनमर्जी की हवायें।
मर्जी कभी शबाबों की कभी दौलत की चर्चायें।।
हम तो हिमालय है चर्चाओं का रुख मोड़ देंगे।
हम तो कलमकार हैं या कह दो कि जलजले हैं।।
चंदन सी संस्कृति तले है मुड़ेंगे गंध छूटेगी।
मर्यादायें छूटेगी जो सुख-चैन भी लूटेंगी।।
बड़बोली बड़ी स्वछंदता बहाव बांध देंगे।।
हम तो कलमकार हैं या कह दो कि बलबले हैं।।
सिद्धांतों के जाल लगा मैल को बाहर करते हैं
खंगालते है कभी जमाना कभी खुद निथरते हैं
दौड़ है भटकाव प्रतियोगियों को बिठा देंगे।
हम तो कलमकार हैं या कह दो भरेगले हैं।।
भेड़ें कहीं भी मुड़ गयीं भले से क्या लेना-देना
क्या सही की आन है और क्या बुरे से बैर लेना
भारतीयता की नींव को हिलने नहीं दे देंगे।
हम तो कलमकार हैं या कह दो कि फलसफे हैं।।

तुममें भी तो मैं ही हूँ

मैं मैं मैं मैं ये कैसे कह दूँ तुममें भी तो मैं ही हूँ।
तुमको बंजर कैसे कह दूँ बांझ की पीर में मैं ही हूँ।।
तुम जब गिरते जल प्रपात बने मैं अंजुरी बन जाती हूँ
तुम जब होते झील से मैं चाँदनी सी नर्तन करती हूँ
तुम जब बनो रसवंत भीजी-भीजी मैं भी तो गाती हूँ
तुम जब देते इस दुनियां को मैं भी देवी बन जाती हूँ
तुमको सूखा कैसे कह दूँ आँख के नीर में मैं ही हूँ।।
तुमको बौना कहूंगी तो जले से उपवन हो जाओगे
ठंडे झोके अभी मलय के भरी दुपहरी रह जाओगे
राजा ओस भरी कलियों के तिनका तिनका रह जाओगे
ठंडा जल हो अभी पोरों पर तपा पाथर रह जाओगे
तुमको थोथा कैसे कह दूँ इस रीतेपन में मैं ही हूँ।।
नीड़ उजाड़ता जो किसी के खुद भी बन्जारा रह जाता
पाथर फेंके जो औरों पर साजा साजा क्या रह पाता
जो भटका देता औरों को क्या कभी वो लक्ष्य पा जाता
कंठ दबाये जो औरों के खुद भी घुट घुटकर वो जीता
तुमको पाला कैसे कह दूं इस पीलेपन में मैं ही हूँ।।

रंगो-रोगन

रंगो-रोगन से तौलते हैं इन्सां हैरान हूं मैं।
वे क्यों बीध जाते हैं झाड़ियों में परेशान हूं मैं।।

जब जब सोचती हूं राख के बारे में
जलना ही है जिसे शाख के बारे में
ऐसे उतरता है धुंआ दिल में कोई श्मशान हूं मैं।।

क्या देते हैं स्वर्ण रजत के भंडारे
सामानों से दूल्हा बने भवन द्वारे
सोचा तब इक खबर दिखी लगा कंकाल अनाम हूं मैं।।

उन्हें बैठे देखा मैंनें हाथी पर
मनुहारें करवाते चाबुक टेढ़ा कर
फेंका जब किस्मत ने तब लगा अपंग इंसान हूं मैं।।

बाधाओं को मत गिनो

जीवन में रस बहुत है उसे ही गुनो।
अनंत रस की बाधाओं को मत गिनो।।

भेदभाव जब सिरमौर सा बने जीवन रीति
न्याय का कंठ फँसा हो आँखें होयें रीती
छार-छार मन मत होने दो कुछ करो।।

दरबारों में नटों के जब जयकारे गूँजें
बनावटों का सुरस पी मायाप्रेमी झूमें
हासिल करो महारतें प्रमाणित करो।।

अहंकार मदारी बन जब चालीसा गाये
सारे जन चारण बनकर धुन में धुन मिलाये
एक विकल्प ही तब तुम संकल्प को चुनो।।

जब भरम सिंहासन बैठे सत्य चंवर झुलाये
दुर्जनता झंडे लिये अपना बिगुल बजाये
भेद मत लेने दो विचार क्रान्ति करो।।

सहता गर्मी की तपन

सहता गर्मी की तपन सीने में लिये अगन।
पानी में डूबा है तन फिर भी जलता बदन।।
स्वेद कण गिरते है झर झर
पाहन का पखारे पग पग
हवा बन उडते फिर फर -फर
बरसते फिर बादल बनकर
पावस जल में है मिला उसका स्वेद नीर बन।।
स्वेद बनता जल बरसाती
सीप रखती ज्यों हो थाती
बूंदें यही बनती मोती।
है अमीरों को चमकाती
कंठों में चमक रहा उसका श्रम मोती बन।।
शीश पर रहा सहा छप्पर
बारिश तोडे है सरबसर
प्यास लाखों की है बुझती
उसको तो बनाया बेघर
हमने ही मेंटा नहीं प्रकृति भी बनी दुश्मन।।
हीतल पर चढ गया है ज्वर
अंतड़ी उमठती तड़ककर
फिर भी टूटते है पाथर
मारता हथौड़ा बराबर
पत्थर कई टूटे पर टूटा कब मालिक मन।।

विश्वास कटते जा रहे

विश्वास कटते जा रहे हैं लोग बेबस से खड़े।
लीके जो खुद ने बनाई उन पर अर्थी से पड़े।।
न निभाता बातें कोई
हिरदय का खूंटा टूटा
हथकड़ी मिलकर बनाई
डर उसका भी छूटा है
भू भी तो ऊसर बन बैठी बीज फिर थोथे मिले।।
बेपर्दा हैं पहले ही
इज्जत की क्या बात सुनें
आग सगरे उपवन लगी
किस किसको बर्बाद कहें
हौआ आदमियत हो गई इक दूजे से हैं डरे।।
दोषों के डंक मारकर
सुंदर पंख लगा लेते
आईने को रिश्वत दे
माफिक माथा कर लेते
सीधी अंगुली जकड़ में है डर के हैं जुये लदे।।
जो भय हैं बेचा करते
क्यों विश्वास निभायेंगे
रूखी रोटी क्यों लेंगे
डरा बंगले पायेंगे
रोटी का रोटी पर डाका नियामक चुप से खड़े।।

सी सा का झूला

अजी हम तुम बैठें हैं जिन्दगी सी सा का झूला।
कभी मुझमें अहं है आया कभी तू अहम् में भूला।।
कभी उमठा तू मंजिल पा और मैं हूं गड्ढे मैं।
कभी शिखर सम्मानित मैं और तू पगतल का शूला।।

हम हक की न कह पाते और वे लेते हैं निचोड़।
पीने को जरुरत पर चीनी सा देते हैं घोल।।
मेरी सांसें घुटती जैसे जमींदोज किया बदन।
वे गर्वित मीनारों से मूंछें लेते हैं मरोड़।।

घोला मन बर्तन में गरल इल्जाम लगाकर।
उनने दिल को दर्द दिया बदनाम लगाकर।।
माना गलत थे तुम गलती पोंछ ही देते।
पटरी प्रेम की तोड़ दी नाकाम बताकर।।

भारत का ही था कश्मीर

जो कभी न होगा वो भरम पालें बैठे हैं।
क्या दिमाग में लगायें वो जाले बैठे हैं।।

भारत का ही था कश्मीर तो सदियों से ही।
वे ये कौन सा काढ़के कसीदा बैठे हैं।।

वे बहरे बने हैं सुनते कब बात हमारी।
और ये पवन के झोंके बताने बैठे हैं।।

ये कहा कब से हमने अलग छतरी न तानो।
वे न मानते अलगाव के मारे बैठे हैं।।

छीन न पाओगे कितने भी आंसू बहा लो।
हम हथेली पे जान लिये आके बैठे हैं।।

कलम मेरी ढोती है

सबके दर्द को कलम मेरी ढोती है।
फटने पर मन के वजह सीती होती है।।

कमजोर टिपारे हैं वे भी तो अपने हैं।
उनके चैन को नींद अपनी खोती है।।

न पता ये हवा कब चुरकनें कर देगी।
उस शीशे को उसकी आंखें रोती है।।

अब तो न करो और गर्भ में हत्यायें।
तब ही मानेंगे कन्यायें न्योती है।।

बिटिया के आने पर हौंसे-फूले जो।
उनकी आंखों की बुझी क्यों ज्योती है।।

बहे जा रहे हैं

दुनिया के धार में बहे जा रहे हैं।
हम हैं अनमने पर चले जा रहे हैं।।

अब ये समय तोड़ता है वर्जनायें।
मसोस कर मन दर्द सहे जा रहे हैं।।

चमकी जो दीवारें बहुत अब भाती।
चाहों में इन्हीं की हम बंटे जा रहे हैं।।

दोस्ती उसूलों से तो निभा न पाये।
चलनों पर मर मिटे उड़े जा रहे हैं।।

कितने हैं वे गहरे हमने न नापा।
उथले जायें न दिख डरें जा रहे हैं।।

आशा के दिये को तुम फूंक न देना।
तुम ही तो वजह हो जिये जा रहे हैं।।

उनकी महफिल की तरह खूब ढले हैं।
कहना मत जड़ों से कटे जा रहे हैं।।

(आनंद बेला)

विश्वास बंद हुआ है

आदमी का आदमी पर विश्वास बंद हुआ है।
कायदों का पुलिंदा सो चाक-चौबंद हुआ है।।

कायदों का डर वे क्यों पालेंगे जी तिल भर भी।
सेटिंग ऐसी हैं भई तुरंत प्रबंध हुआ है।।

वाह वाह है उनकी जो रोज हमें हैं डराते।
कायदों निभाये उनने जो गरजमंद हुआ है।।

सांस बैठी जाती है के अब तो आदमियत की।
आदमी का अहंकार भई हुनरमंद हुआ है।।

समझ ली हैं मजबूरियां उन्होंने अब हमारी।
हौसला उनका साहब और भी बुलंद हुआ है।।

ये नववर्ष हमारा नहीं है

ये नववर्ष हमारा नहीं है।
फैला भी उजियारा नहीं है।।

धान नया अभी आव कहां है,
खेत ने गीत गाया नहीं है।।

कैसे मिलकर धमाल मचाये
जंगल ठूंठे साया नहीं है।।

ठंड डांटती ओढ़ो रजाई
मौसम भी तो नहाया नहीं है।।

चैत में होंगे नूतन झंडे
ये आनंद हमारा नहीं है।।

दिखाना नहीं है

गरीबी है लेकिन गरीबी दिखाना नहीं है।
गरीबी का कार्ड सो भैया बनाना नहीं है।।

शराबों से मरा आदमी बेबा है नारी।
टिपारों है कच्चो फिरौ कार्ड बनाना नहीं है।।

पईसा मांगे चार हजार कार्ड को बनाने।
गरीबी कार्ड बनबाने को अमीरी नहीं है।।

कपूरी दे आयी आबरू कार्ड को बनाने।
अबै धन्नो के मन में ऐसी बातें नहीं है।।

रखाया कार्ड गिरवी दो बोतल शराब को है।
समाचारों में सुर्खियां थीं गरीबी नहीं है।।

क्यों बेटी बचायें

क्यों बेटी बचायें क्यों बेटी पढ़ायें हम।
पौधे को पेड़ बना तुमसे जलवायें हम।।
अपने सपनों का मारण।
तब बेटी बढ़ती आंगन।।
गगन चूमना रखती मन।
तब होय अंश-अंश बढ़न।।
जैसे होय किसान लालटेन जगायें हम।।
न किसी की होगी दासी।
प्रतिदिन खूब सिखाया है।।
अपनी होगी खुद रानी।
गगन पूरा दिखाया है।।
हैवान निकला जग खुद को झुठलवायें हम।।
विश्वासों की ले पूंजी।
मेल सबसे बढ़ाती है।।
नग्न किया विश्वासों को।
बेटी फिर थर्राती है।।
राक्षसों से भरा जग बेटी नुचवायें हम।।
अब तो कृष्ण कोई नहीं।
कब है कोई जटायु भी।।
हनुमान भी कब है कहीं।
सबकी वीरता मर रही।।
भीरु समाज से कैसे आस लगायें हम।।

(आनंद बेला)

सृजन का बीज

सृजन का बीज जब देखूं तो मिट्टी हो जाऊं मैं।
कहीं पर खाद हो जाऊं कहीं नीर हो जाऊं मैं।।
प्रभु कृपा तुम करना कहीं मठा मत बनाना मुझको।
कहीं सूरज हो जाऊं कहीं समीर हो जाऊं मैं।।

गंगा सा हो मन पावन गीता सा हो मन पावन।
सर्वोत्तम खिले हो पुष्प विचारों का एक उपवन।।
पाला पड़े ओले गिरे या आ जाये झंझावत।
हो वे अडिग पर्वत से कर ले संकल्पों का रोपण।।

सरलता हूं तरलता हूं सम्मान सबका है मुझमें ।
जल रहे दीपक द्वारों पर स्वागत कांति है मुझमें ।।
अगणित कंटक बिखेरे पवन विषदंती हो मोटे।
गहनता समुंद सी है पाओगे विश्रांति ही मुझमें ।।

अच्छा होता

कड़वी बातें भुला ही देते तो अच्छा होता।
दिल में अस्तर लगा ही लेते तो अच्छा होता।।

निंदाई करते रखते बस अच्छाईयां
गुड़ाई करते माटी पीती प्रेम पनिया

नव पौधे लगा ही देते तो मधुरिम फल होता।
उधड़ी बखिया सिल ही देते तो नूतन कुछ होता।।

कड़वी बातों को मन और हिय पर न रखना
गंदा जल रोक दुर्गंध पैदा मत करना

मन का कचड़ा हटा ही देते मन सुगंध होता।
दिनमान धुंध हटा ही देते जग रोशन होता।।

अपनों को अपने ही कभी देते जब चोट
लगता घर में छुपे बैठे थे कितने चोर

झिर से काई निकाल देते निर्मल नीर होता।
मन की बातों से भरम हटाते मन बुद्ध होता।।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - **संगीता गुप्ता**

माता - श्रीमती रमा गुप्ता

पिता - कवि स्व.श्री बाबूलाल गुप्ता

पति - श्री गिर्राज गुप्ता

शिक्षा - एम .ए. (अर्थशास्त्र) बी. एड.

सम्प्रति - अध्यापिका, शासकीय माध्यमिक विद्यालय, रेंहट, ग्वालियर म.प्र.

रुचि - अध्ययन, लेखन, मृदा मूर्तिकला, गीतों को लयबद्ध करना और उनका गायन करना आदि।

प्रकाशन - प्रथम रचना कक्षा-६ में लिखी गयी। उच्चतर माध्यमिक विद्यालय स्तर पर पत्रिका में लेख प्रकाशित हुआ। प्रथम कहानी सीमा २७ वर्ष की आयु में मधुरिमा में १९९८ में प्रकाशित हुयी। दूरदर्शन व आकाशवाणी से प्रसारण हो चुका है। अभी तक लगभग २५ कहानियां, लगभग २०० कवितायें और दस व्यंग्य व आलेख लिखे जा चुके हैं। आधी रचनायें पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

पता- फालके बाजार लश्कर ग्वालियर म.प्र., पिन-४७४००१

मो.- ८३५८०८०६४७

ई.मेल- sangeetagupta340@gmail.com

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी ।

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com
१५, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९, अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com
978-93-5372-076-6
मूल्य 120/-
शब्द सुगंध